International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 06-08-2021, Accepted: 20-08-2021, Published: 03-09-2021
Volume 7; Issue 5; 2021; Page No. 4-7

हिन्दी उपन्यासों में कामकाजी महिलाऐं और बाजारवादी संस्कृति

डॉ. तबस्सुम खान[1], वेदिका यदन लाल बनौठे[2]
हिन्दी, विभागाध्यक्ष, श्री सत्यसाईं विश्व विध्यालय सीहोर, मध्य प्रदेश, भारत
शोध छात्रा, हिन्दी–विभाग, श्री सत्यसाईं विश्व विध्यालय सीहोर, मध्य प्रदेश, भारत

सारांश
बाजारवादी दौर में तकनीकी विकास ने स्त्रियों को वह आजादी दी कि वे आत्मनिर्भर बने, उन्हें सूचना उपकरणों द्वारा तरह–तरह की जानकारियां मिली। इस क्षेत्र में मोबाइल एक अत्यन्त सहायक उपकरण है जिसके उपयोग से प्रदीप सौरभ के उपन्यास ''मुन्नी मोबाइल'' की नायिका कब मुन्नी से मुन्नी मोबाइल बन जाती है उसे स्वयं भी पता नहीं चलता। बिहार के एक गांव से दिल्ली के साहिबाबाद में आकर बसना उसके लिए आसान नही था– ''बक्सर से आने के बाद उसने.... झुग्गी से मकान का सफर भी यहीं तय किया।'' वह पहले एक घरेलू महिला की तरह अपनी गृहस्थी चलाती हैं। चूंकि महानगरीय सभ्यता का प्रभाव उस पर पड़ता है और वह बाजारवादी संस्कृति की लालसाओं और सपनों की दुनिया में जीने लगती है। उसकी महत्वाकांक्षाये उसे निरंतर आगे बढ़ने और पैसा कमाने का दबाव उस पर डालती गई।'' पहली बार जब उसने स्वेटर बुनकर पचास रूपये कमाये तो उसने सपनों की झडी लगा दी। उसे लगा अब टी.वी. से लेकर फ्रिज तक अब उसके घर आ जायेगा। पचास रूपये से उसकी कमाई पांच सौ तक पहुंच गई।'' मुन्नी को बाहर की दुनिया अच्छी लगने लगी। मुन्नी अब नर्सिंग का काम भी सीखने लगी। डा. शशि अवैध गर्भपात कराकर पैसे कमाती थी। मुन्नी भी इस काम में उसका साथ देने लगी।'' गांव में नर्सिंग होम और डॉक्टर न होने के चलते उसकी दुकान चल गई। मुन्नी मोबाइल इसी नर्सिंग होम में बतौर नर्स काम करने लगी। हजार रूपये उसकी पगार तय हो गई। वह भी केस लाने लगी। मोटा कमीशन खाने लगी।
बाजारवादी संस्कृति के प्रभाववश मुन्नी कहीं भी चैन और आराम की सांस नहीं लेती। घरों में काम करते–करते मुन्नी प्रसिद्ध हो गयी थी। आनंद भारती के यहां काम करते हुए उसने नार्थ इण्डियन चाइनीज, इटैलियन, मैकिसमन आदि कई तरह की पाक कलाएं सीख ली थी। उसकी मांग बढ़ने लगी थी। ''लेकिन उसके पास समय नहीं था। वह झाड़ू–पोंछा करने वाली महिलाओं को कुक बनाकर भेजने लगी। काम दिलाने के नाम पर पहली तनख्वाह का वह आधा हिस्सा बतौर कमीशन लेने लगी।'' मोबाइल उसके लिए जादू की छड़ी से कम न था। मोबाइल पर ही सब कुछ तय करके वह काम करने लगी।
उसे खुद पर गर्व होने लगा। वह कहती है– ''पैसे कमाने के लिए लोग पढ़ाई करते है और मैं बिना पढ़े–लिखे पैसा कमा रही हूं। वैसे जिस दिन चाहूंगी दस्तखत करना सीख जाऊंगी।'' अतः मुन्नी एक साहसी और स्वतन्त्र स्त्री है। वह अपने अधिकारों को भुनाना जानती है। पितृसत्ता की कोई जकड़न उस पर अपना अधिकार नहीं जमाती इसलिए वह सही मायने में एक स्वतन्त्र स्त्री हे परन्तु उसकी यह स्वतन्त्रता उसे महत्वाकांक्षाओं के उस मोड़ पर ले जाती है जहां से वह कभी वापस नहीं आ पाती।
मौजूदा संस्कृति लोगों को पैसे की हवस और बाजार के आकर्षण के चलते गलत रास्ते अख्तियार करने पर मजबूर करती है। ''तरक्की की मायने लम्बी कार, बडा बंगला है। पैसा ही माई–बाप है और पैसे को कोई साधारण आदमी सही–गलत काम किये बगैर हासिल नहीं कर सकता है।'' वर्तमान व्यवस्था इंसान का बुरा करने के लिए प्रेरित करती है। नैतिकता की उसमें कोई जगह नहीं। मूल्य शब्द बेमानी हो गये हैं। पैसा हासिल करने का हर गलत रास्ता एक सच्चा रास्ता है।''

मूलशब्द: कामकाजी महिलाऐ, बाजारवादी संस्कृति

प्रस्तावना
किसी भी स्त्री की विशिष्ट स्थिति का निर्धारण सामाजिक संरचना की महत्वपूर्ण भूमिका के द्वारा होता है। ऐतिहासिक विकासक्रम में स्त्री की सामाजिक परिस्थितियों में विकासशील परिवर्तन अंकित किया गया है। धीरे–धीरे मातृ सत्ता के ऊपर पितृसत्ता हावी होने लगी और स्त्रियों को एक बार पुनः कमतर समझा जाने लगा। स्त्री देह और संसाधनों पर पुरूष का वर्चस्व स्थापित होने लगा। ''धरती पर अधिकार के लिए उत्तराधिकार एवं देह पर अधिकार के लिए विवाह संस्था'' को अनिवार्य बना दिया गया।
सत्ता, सम्पत्ति और संतान के अधिकारों के वंचित स्त्री एक वस्तु के समान बन गई। पितृसत्ता में स्त्री को रिश्तों द्वारा संबोधित किया गया उसे मां, बहन, बेटी और पत्नी से अधिक एक व्यक्ति की भांति स्वीकार नहीं किया गया। बदलती सामाजिक संरचना ने पितृसत्ता की जटिलता को न्यूनतम किया। अर्थव्यवस्था और सम्पत्ति में भागीदार न होना एक स्त्री के जीवन की सबसे बड़ी विडम्बना थी। संयुक्त राष्ट्र संघ की एक रिपोर्ट में बताया गया कि, ''पुरूषों के बराबर आर्थिक और राजनीतिक सत्ता पाने में औरतों को अभी हजार वर्ष लगेंगे दुनिया की 98 प्रतिशत पूंजी पर पुरूषों का कब्जा है।'' यह असमान वितरण ही स्त्रियों की निम्न स्थिति का प्रमुख कारण रहा है। मार्गरेट बेन्सटन का मानना है कि, ''जब तक घर का काम–काज निजी उत्पादन का मामला बना रहेगा, स्त्रियों को दोहरे दायित्व का बोझ उठाना होगा।'' स्पष्ट है कि, स्त्री को एक स्वतन्त्र इकाई के रूप में नहीं देखा गया। समकालीन परिवर्तित परिस्थितियों में स्त्रियों ने स्वयं को एक स्वतन्त्र इकाई के रूप में खड़ा किया है। वे कभी भी मानसिक और शारीरिक श्रेष्ठता को दर्शाने में पीछे नहीं रही है। जीवशास्त्रीय विषमता तो उनमें हैं किन्तु बौद्धिक और नैतिक क्षमता दोनों में समान होती है बल्कि स्त्री में कभी–कभी अधिक होती हे।
द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद आये सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तनों तथा वैज्ञानिक और तकनीकी विकास ने स्त्रियों की स्थिति में सुधार करने के प्रयास किये क्योंकि ''किसी भी राष्ट्र का विकास उसकी सम्पूर्ण मानव क्षमता के ऊपर निर्भर करता है और स्त्रियां

विश्व की आधी आबादी है।'' वस्तुतः शिक्षा विकास का मूल आधार है इसलिए स्त्री शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया गया। स्त्रियां धीरे–धीरे आर्थिक रूप से स्वावलम्बित होने लगी। शिक्षा और आर्थिक स्वतन्त्रता ने स्त्रियों को घर की चारदीवारी से बाहर निकाला।

नई पीढ़ी ने शिक्षा द्वारा रोजगार के नये अवसर हासिल किये– ''शिक्षा के प्रसार ने विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों में स्त्रियों के लिए शारीरिक श्रम की अपेक्षा रखने वाले कार्यो, अलग किस्म के रोजगारों–जैसे क्लर्क, प्रशासक, वकील, डॉक्टर आदि कामों के अधिक अवसर सुलभ कर दिये है।'' इस प्रकार नौकरी पेशा लड़कियों की संख्या में बढ़ोत्तरी होती गयी। जैसे–जैसे स्त्रियां आर्थिक रूप से स्वावलम्बी, नौकरीशुदा और शिक्षित होने लगी वैसे–वैसे उनके अस्तित्व से संबंधित नये बिन्दु उनके साथ जुड़ते गये। रोजगार के नये अवसरों ने स्त्री जीवन से संबंधित विभिन्न पहलुओं को प्रभावित किया।

आर्थिक कारणों ने स्त्रियों को कामकाजी बनने के अवसर दिये। 70 के दशक में भूमण्डलीकरण के साथ ही तीसरी दुनिया के देशों में स्त्रियों की श्रमशक्ति के पक्ष में वुद्धि हुई। स्त्री शिक्षा और रोजगार के नये अवसर तलाशे गये। स्त्रियों के विकास को राष्ट्रीय स्तर पर महत्वपूर्ण समझा जाने लगा। स्त्रियों को उच्च शिक्षा के लिए प्रेरित किया गया, उन्हें गैर पारम्परिक क्षेत्रों में भी रोजगार की संभावनाओं को देखते हुए भेजा गया। तकनीकी एवं व्यवसाय के क्षेत्रों में भी स्त्री के लिए अवसर खुले। वे आर्थिक क्षेत्र जो अब तक पुरूषों के अधीन थे उन पर स्त्रियां काबिज होने लगी। स्त्रियां घर से बाहर सुदूर क्षेत्रों में नौकरी करने के लिए इच्छुक हुई। स्त्रियों की आत्मनिर्भरता में वृद्धि हुई।

पिछले 17–18 वर्षों में स्त्रियां निर्णायक भूमिका वाले पदों पर दिखाई देने लगी है। बाजारवाद ने एक नई कामकाजी महिला को जन्म दिया जो आत्मनिर्भर, आत्मविश्वासी, अधिकार सम्पन्न और समृद्ध स्त्री है। इसे ''पावर वूमेन'' की संज्ञा दी गई जो घर और बाहर हर क्षेत्र में बॉस की भूमिका निभा सकती है। वह परिवार में निर्णय लेने योग्य समझी गई। स्त्री ने अपनी योग्यता और क्षमता को एक व्यक्ति के रूप में स्थापित किया जो अब मात्र एक जैविक इकाई (स्त्री) नहीं है।

हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में स्त्री संबंधित प्रश्नों को बहुत पहले से लेखन का रूप दिया गया। 21वं सदी में बाजारवाद के दौर में कामकाजी महिलाओं की सामाजिक तथा आर्थिक स्थितियों को ध्यान में रखते हुए भी उपन्यासों की रचना की गई जिनमें कामकाजी स्त्री की विभिन्न भूमिकाओं, समस्याओं, संभावनाओं और दायित्वों पर कथात्मक रूप से चर्चा हुई है। उपन्यासों में कामकाजी महिलाओं पर बाजारवादी संस्कृति के बढ़ते प्रभावों को भी एक नई जीवनशैली के रूप में दर्शाया गया है।

मैत्रेयी पुष्पा का उपन्यास ''विजन'' उत्तर आधुनिक दौर के इस भ्रम को मिटाता है कि, अभिजात वर्ग की सभी केरियन वूमेन स्वयंवरा है। ''स्वयंवरा होने की चाह में चहकती डूबती डॉक्टर नेहा और डॉक्टर आभा किस तरह पुरूष सत्ता द्वारा व्यक्तित्वविहिन कर दी जाती हैं, इस तथ्य का खुलासा मैत्रेयी पुष्पा ने चिकित्सीय पेशे की पृष्ठभूमि में गहरी संलग्नता के साथ किया है।'' विजन की डॉ. आभा और डॉ. नेहा आत्मनिर्भर और उच्च शिक्षित होते हुए भी पुरूष वर्चस्व की बंदी है। नेहा प्रश्न करती है– ''तरक्की करने का अधिकार और अवसर मिलेगा कभी? पापा जी बताएं कि वे अवसर छीन क्यों लेते हैं? बहू, बाप, बेटे को अप्रसांगिक न कर दे और एक दिन इस अस्पताल की सत्ता पर काबिज हो जाय! ऐसी औरतें भयानक होती है। .... अतः नारी का काम पुरूषों के काम में दखल देना नहीं बताया गया। डॉ. होने के नाते वह इस परिवार के लिए पदक जैसी है। शी इज अ मैडल। देखने–दिखाने भर की चीज नहीं नहीं चीजें बना दी हे डॉ. आर. पी.शरण ने।'' सामान्यतः परिवार और विवाह के प्रश्न पर कामकाजी स्त्रियों को एक दोहरे संघर्ष से गुजरना पड़ता है।

कामकाजी स्त्री कई बार पारिवारिक दायित्वों के चलते निपुणता से अछूती रह जाती है। कार्यस्थल में जहां स्त्री की भूमिका निर्णायक क्षमता का निर्वहन करती है वहीं घर में उसकी निर्णायक क्षमता को भी पुरूष की अधीनता में रखा जाता है। घर के बाहर तो वह ''सोसायटी वूमेन'' है परन्तु घर के भीतर वह एक खूबसूरत गुड़िया से अधिक नहीं बन पायी।'' नेहा ने मिसमिसाकर स्वर मींचकर अपने आपको संयमित किया और संकल्प लिय अब स्त्रियों के स्वभाव वाले कुछ लक्षण मुझे त्यागने होंगे। जब तुम लोगों के क्षेत्र में दखल दे ही रही हूं तो व्यवहार में भी ताकतवरी होनी ही चाहिए, वही मुझे तुम लोगों से आगे ले जा सकती है, जबकि अब तक के स्वभावगत गुणों ने मुझे बराबरी पर भी नहीं आने दिया।'' आज स्त्री दोनों भूमिकाओं में द्वन्द्वझेलती है। 21वीं सदी में कामकाजी स्त्री की बदली हुई छवि तो स्वीकार्य है परन्तु पत्नी की एक कामकाजी स्त्री की छवि अब भी स्वीकार्य नहीं हो पाई है।

रेखा कस्तवार का मानना है कि– ''परिवार के बाहर श्रम बाजार में रम का लैंगिक विभाजन औरतों को पुरूषों पर आर्थिक रूप से निर्भर बनाये रखता है– तब भी जब वे स्वयं वेतन पाती हैं। कार्यस्थल पर स्त्री के प्रति होने वाले शोषण स्त्री की दोयम दर्जे की स्थिति एवं पूंजीवादी विक्रय प्रयासों के परिणामस्वरूप स्त्री के वस्तुकरण के कारण गहरा हो जाता है।'' नेहा चूंकि एक सर्जन है इसलिए वह आपरेशन करने में परिपक्व हैं और इसी क्षेत्र में अपनी निर्णायक भूमिका निभाना चाहती है, परन्तु उसे उसकी क्षमता के विपरीत कार्य सौंपा जाता है– ''भीतर ही भीतर कुढ़ती रह रोती रह कौन सुनने वाला है? यंत्रचलित सी स्वागतकक्ष में कुर्सी पर बैठ जाती और गुड़िया की तरह काम निपटाती रहती। फोन, रजिस्टर, बुकिंग और लेसों के खर्च का हिसाब किताब..... तेल की चैकिंग.... आपरेशन का मौका कब हाथ लगे?'' एक शिक्षित और स्वावलंबित स्त्री होते हुए भी कार्यस्थल पर स्त्री को दोयम दर्जे की भूमिका देना, पुरूषवादी समाज की ही की युक्ति है जिससे स्त्रियां उनके अधीन ही रहे।

नेहा अपनी क्षमता के विषय पर सोचती हुई किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाती है– ''तरल–तरल आंखों वाली नेहा भीतर से ठोस लोहा होती जा रही थी। सिंहासन कौन मांग रहा है, पांव रखने भर की जगह चाहिए कि, वह खडी हो सके। मरीज ऑपरेशन टेबल की साइड में नहीं, उसके पहले सिरे पर।'' नेहा के ससुर उसे अपनी असस्टिेंट बनाकर रखना चाहते थे। वह उसे उसकी काबिलियत और क्षमता के अनुरूप कार्य न देकर उसे कमतर आंकते हैं।

उपन्यास में डॉ. आभा एक ऐसी स्त्री है जो सशक्त है, अपने निर्णय स्वयं लेती हैं और अपने अधिकारों के लिए अडिग हैं। वह नेहा को स्वतंत्र और स्वावलंबित स्त्रियों को हवाला देते हुए कहती है– ''नेहा अपने देश की प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी, ब्रिटेन की मार्गरेट थ्रेचर, इजराइल की गोल्डा मायर राजनीति में अपना सिक्का जमाने में सफल रही और सिद्ध राजनीतिक पुरूषों पर भारी पड़ी तो अपनी क्षमता और पुरूषों जैसे व्यवहार के कारण।'' वह आज की नारी है जो अपने लिए जीना जानती है। अपने अधिकारों की रक्षा करती है और अपने कैरियर को बचाने के लिए अपने पति मुकुल से विवाह विच्छेद का निर्णय लेती है क्योंकि मुकुल को लगता है कि, आभा को पारिवारिक दायित्वों को कार्यस्थल की अपेक्षा वरीयता देनी चाहिए। शायद इसी कश्मकश ने स्त्री को दोहरे दायित्वों को बांधा। पति घर में सुविधा और आराम के दायित्व निभाता है परन्तु स्त्रियों से यह पारिवारिक जिम्मेदारी के दायित्व कभी नहीं छूटते। पुरूष प्रधान समाज में कैरियर वूमेन बनना इतना भी आसान नहीं होता और अगर होता तो डॉक्टर आभा को डॉ. चोपड़ा के ये व्यंग्य बाण शायद सुनने न पड़ते– ''डॉक्टर आभ्झा इज मेड। शे भी

सिनिकल फ्रस्ट्रेटड वूमेन। साली ने पति क्या छोड़ा पुरूषों की दुश्मन हो गई। आई फेमिनिज्म की नानी।'' भारती पारम्परिक पितृसत्तात्मक समाज में अभी भी उच्च शिक्षा और अच्छे कैरियर के बावजूद स्त्री नियति से मुक्त होना स्त्री अस्मिता के लिए एक बड़ा सवाल है।

वह स्त्री शोषण के विरूद्ध आवाज उठाती है। इसके लिए वह अपने कैरियर को भी दांव पर लगा देती है। उसके सहकर्मी उसके संबंध में कहते हैं– ''सर, डॉ. आभा सिरफिरी है। एफ.आई. आर. से निपटा जा सकता है, उससे नहीं। .....पुलिस वाले इतने नासमझ नहीं होंगे, जितनी यह आभा नाम की औरत। ..... वे ऐसे जल्लाद भी नहीं होते, जैसे कि ये औरते।'' डॉ. आभा का विचार है कि– ''पति की अनुगामिनी बनना ही तो जीवन का ध्येय नहीं। सहगामिनी होती तो बात कुछ और होती। जिन्दगी को मिशन माना था आभा ने। मिशन, जो किसी कॉज के लिए होता है, महज व्यक्ति के लिए नही।'' भूमण्डलीकृत समय की कामकाजी स्त्री पारम्परिक, विवाहिता और स्वावलम्बी होने की चाह में नट की तरह झूलती रहती है।

कैरियर वूमेन की विवाह संबंधी विवशताओं को भी उपन्यास में दर्शाया गया है। नेहा की मौसी कहती है– ''डॉक्टरी पढ़ ली तो क्या अफलातून हो गयी? सोने से लड़के को लात मारकर आई है कुलिच्छन। बहना, पढ़ाई–लिखाई है कि, घमण्ड की सनदे हैं, जिसके बल पर मां–बाप को भी औंधा कर देंगे ये लड़कियां?'' बढ़ती आर्थिक जरूरतों ने पुरूष मानसिकता में परिवर्तन किया तभी स्त्री की भागीदारी पारिवारिक आमदनी में संभव हो सकी पर क्या विवाह और नौकरी समानांतर संभव हो सकती है? आभा अपने पिता से पूछती है कि, इसकी क्या गारंटी है कि, मेरा होने वाला पति यदि मेरे प्रोफेशन से जुड़ा है तो मेरी सहयोगी होगा, मुझे समझेगा। वे कहते है– ''मेरे ऊपर भरोसा नहीं है बेटी? अपनी पढ़ी लिखी, खुले विचारों की पीढ़ी पर विश्वास करो। यह आजादी के..... विकास के बाद की पीढ़ी है।.... वैरी प्रैक्टिकल। दकियानूसी सोच, रूढियां, कुरीतियां अब कहां? ऐसा होता तो आज क्या हर चौथे घर की लड़की डॉक्टर, इंजीनियर, कम्प्यूटर मास्टर, पायलेट और पुलिस की इंस्पेक्टर जनरल होती? ये सब कुंआरी ही तो नही।'' यह समकालीन युग की एक बड़ी सच्चाई है जिससे कामकाजी स्त्रियों की नियति में सुधार तो हुआ परन्तु हमारे पारम्परिक मूल्यों में यह सच कितना स्वीकार्य है इसे देखना जरूरी है।

कामकाजी महिलाओं के लिए दोहरा दिन व्यतीत करना एक सच्चाई हैं। आभा के विवाह के फैसले ने उसे गृहस्थी और कार्यस्थली के मध्य फैला दिया। डॉ. चक्रवती उसकी स्थिति पर कहते हैं कि– ''आभा तुमने देखा होगा एम.बी.बी.एस. में गर्ल्स की संख्या लड़कों से ज्यादा होती है। बाद में पोस्ट ग्रेज्यूएशन में तुम्हारे साथ कितनी कलासमेट्स (सहपाठी) आयीं? रो–धोकर एम. डी.एम.एस. कर भी ली तो फिर सीनियर रेजीडेंसी में फकत दो या तीन। मैं पूछता हूं कहां जाती हैं लड़कियां? ऐसी कौन मजबूरी होती है कि योग्य लड़कियों का जत्था का जत्था गायब हो जाता है? अब नही पूछूंगा, क्योंकि मैं जान गया हूं वे लड़कियां तुम्हारी जैसी ही होती होंगी।'' आखिर विवाह और परिवार की जंजीरों में बंधी आभा का बांध टूट गया और अ बवह आधुनिक युग की नारी बनकर सामने आयी जो अपने स्व और अधिकारों के लिए खड़ी होती है।

कामकाजी महिलाओं ने आज पुरानी परिभाषाओं को बदला है। विवाह जो अब तक सबसे महत्वपूर्ण समझा जाता रहा है उसके मायने बदल रहे हैं। स्त्रियां अपने कैरियर को लेकर अधिक सजग हुई हैं, परन्तु विजन की नेहा और आभा समकालीन समय की स्त्रियां है फिर भी उन पर पितृसत्ता हावी है। वे अपने कैरियर का निर्णय तो लेती है क्योंकि उन्हें शिक्षा का अधिकार है पर अभिजात वर्गीय होने के बावजूद उन्हें विवाह की पारम्परिक रूढियां बांधे रहती हैं। वे पितृसत्ता की दीवार को उस साहस और दृढ़ता के साथ पार नहीं कर पातीं जिस साहस की अपेक्षा भूमण्डलीकरण के समय में आज की स्त्री से की जाती है। भूमण्डलीकरण ने पितृसत्ता के प्राचीन रूप को न केवल मजबूत बनाया बल्कि उसके नये रूपों का निर्माण भी किया है। भूमण्डलीकरण में महिलाओं का शोषण केवल दफ्तर तक ही सीमित नहीं है बल्कि पारिवारिक दायित्वों एवं अपेक्षाओं का दोहरा भार भी उसके लिए शोषण से कम नहीं होता। इसी असंतुलन के मध्य जीती स्त्री कई बार अपराध बोध या अवसाद ग्रस्तता का शिकार हो जाती है, जैसे विजन की डॉ. नेहा ''विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार 15 से 40 आयु वर्ग की स्त्रियों में एक आयामी अवसाद ग्रस्तता सबसे बड़ी बीमारी है।'' स्त्रियों की परम्परावादी मानसिकता और आधुनिक जीवन शैली का असामंजस्य ही उनकी इस स्थिति का कारण है।

बाजारवादी दौर में तकनीकी विकास ने स्त्रियों को वह आजादी दी कि वे आत्मनिर्भर बने, उन्हें सूचना उपकरणों द्वारा तरह–तरह की जानकारियां मिली। इस क्षेत्र में मोबाइल एक अत्यन्त सहायक उपकरण है जिसके उपयोग से प्रदीप सौरभ के उपन्यास ''मुन्नी मोबाइल'' की नायिका कब मुन्नी से मुन्नी मोबाइल बन जाती है उसे स्वयं भी पता नहीं चलता। बिहार के एक गांव से दिल्ली के साहिबाबाद में आकर बसना उसके लिए आसान नही था– ''बक्सर से आने के बाद उसने.... झुग्गी से मकान का सफर भी यहीं तय किया।'' वह पहले एक घरेलू महिला की तरह अपनी गृहस्थी चलाती हैं। चूंकि महानगरीय सभ्यता का प्रभाव उस पर पड़ता है और वह बाजारवादी संस्कृति की लालसाओं और सपनों की दुनिया में जीने लगती है। उसकी महत्वाकांक्षाये उसे निरंतर आगे बढ़ने और पैसा कमाने का दबाव उस पर डालती गई।'' पहली बार जब उसने स्वेटर बुनकर पचास रूपये कमाये तो उसने सपनों की झडी लगा दी। उसे लगा अब टी.वी. से लेकर फ्रिज तक अब उसके घर आ जायेगा। पचास रूपये से उसकी कमाई पांच सौ तक पहुंच गई।'' मुन्नी को बाहर की दुनिया अच्छी लगने लगी। मुन्नी अब नर्सिंग का काम भी सीखने लगी। डा. शशि अवैध गर्भपात कराकर पैसे कमाती थी। मुन्नी भी इस काम में उसका साथ देने लगी।'' गांव में नर्सिंग होम और डॉक्टर न होने के चलते उसकी दुकान चल गई। मुन्नी मोबाइल इसी नर्सिंग होम में बतौर नर्स काम करने लगी। हजार रूपये उसकी पगार तय हो गई। वह भी केस लाने लगी। मोटा कमीशन खाने लगी।

बाजारवादी संस्कृति के प्रभाववश मुन्नी कहीं भी चैन और आराम की सांस नहीं लेती। घरों में काम करते–करते मुन्नी प्रसिद्ध हो गयी थी। आनंद भारती के यहां काम करते हुए उसने नार्थ इण्डियन चाइनीज, इटैलियन, मैकिसमन आदि कई तरह की पाक कलाएं सीख ली थी। उसकी मांग बढ़ने लगी थी। ''लेकिन उसके पास समय नहीं था। वह झाड़ू–पोंछा करने वाली महिलाओं को कुक बनाकर भेजने लगी। काम दिलाने के नाम पर पहली तनख्वाह का वह आधा हिस्सा बतौर कमीशन लेने लगी।'' मोबाइल उसके लिए जादू की छड़ी से कम न था। मोबाइल पर ही सब कुछ तय करके वह काम करने लगी।

उसे खुद पर गर्व होने लगा। वह कहती है– ''पैसे कमाने के लिए लोग पढ़ाई करते है और मैं बिना पढ़े–लिखे पैसा कमा रही हूं। वैसे जिस दिन चाहूंगी दस्तखत करना सीख जाऊंगी।'' अतः मुन्नी एक साहसी और स्वतन्त्र स्त्री है। वह अपने अधिकारों को भुनाना जानती है। पितृसत्ता की कोई जकड़न उस पर अपना अधिकार नहीं जमाती इसलिए वह सही मायने में एक स्वतन्त्र स्त्री हे परन्तु उसकी यह स्वतन्त्रता उसे महत्वाकांक्षाओं के उस मोड़ पर ले जाती है जहां से वह कभी वापस नहीं आ पाती।

मौजूदा संस्कृति लोगों को पैसे की हवस और बाजार के आकर्षण के चलते गलत रास्ते अख्तियार करने पर मजबूर करती है।

''तरक्की की मायने लम्बी कार, बडा बंगला है। पैसा ही माई–बाप है और पैसे को कोई साधारण आदमी सही–गलत काम किये बगैर हासिल नहीं कर सकता है।'' वर्तमान व्यवस्था इंसान का बुरा करने के लिए प्रेरित करती है। नैतिकता की उसमें कोई जगह नहीं। मूल्य शब्द बेमानी हो गये हैं। पैसा हासिल करने का हर गलत रास्ता एक सच्चा रास्ता है।'' मुन्नी ने भी ठीक यही किया पैसा कमाने की होड़ से गलत रास्तों पर भेज देती है। नैतिकता उसके लिए मायने नहीं रखती। यहां तक कि, उसके दोनों बेटे और पति भी उसकी इन महत्वाकांक्षाओं की बलि चढ़ जाते हैं और उससे दूर हो जाते हैं। पैसा का लालच उसे ''सैक्स रेकेट'' चलाने वाली महिला में तब्दील कर देता है जिसके कारण उसका मर्डर कर दिया जाता है और उसकी बेटी तकनीकी साधनों का प्रयोग करते हुए ''सैक्स रैकेट'' की वारिस बनकर उभरती है और रेखा चितकबरी के नाम से जानी जाती है।

काशीनाथ सिंह का ''रेहन पर रग्धू'' भी बाजारवादी संस्कृति को उपन्यास के नारी पात्रों पर दर्शाता है। सोनल जो एक अभिजात वर्गीय, उच्च शिक्षित स्त्री है। उसने अपनी इच्छानुसार संजय से विवाह किया। अमेरिका में उसके साथ रहने लगी। उसे अमेरिकन संस्कृति का चलन नहीं भाता। ''वह तीन साल से ऐसी दुनिया में रहकर आयी थी जहां अंधेरा नहीं होता, जहां बूढ़े नहीं रहते थे, जहां हर चीज दौड़ती–भागती, उछलती–कूदती, नजर आती थी, जिसमें लपक–चमक और कौंध थी, जहां जवान और जवानियां और तरह–तरह के रंग थे जहां कुछ भी अपनी जगह खड़ा और स्थिर नहीं दिखाई नहीं पड़ता था।'' यह अमेरिकन संस्कृति ही बाजारवादी संस्कृति का पर्याय है जो तीसरी दुनिया पर हावी हो रही है ।

वह एक ऐसी दुनिया में विचरण कर रही थी जहां प्रेम, संवेदना, स्नेह जैसे शब्द गंवारपन की तरह थे। वह अपने पति संजय से जब भी उसकी अनैतिकता की बात करती वह कहता कि– ''तुम देश और काल के हिसाब से अपने को बदलना सीखो, चलना सीखो। न चल सको तो चुपचाप बैठो या लौट जाओ।''

सोनल विश्वविद्यालय में लेक्चरर बन भारत वापस आ जाती है और संजय अपनी उच्छृखलताओं के साथ अमेरिका में बसना पसंद करता है। इतनी आधुनिकता वाले देश में रहने के बावजूद संजय ने उसे कभी हाउस वाइफ से अधिक नहीं बनने दिया। सोनल की नौकरी का फैसला उसका अपना था क्योंकि वह इस उच्छृंखलता वाले जीवन से ऊब चुकी थी। विश्वविद्यालय की नौकरी ने उसमें एक नया आत्मविश्वास जगाया। वो अपने अकेलेपन को इन्जवाये करने लगी– ''टेप रिकार्डर है, टी.वी.है, कम्प्यूटर है, मोबाइल है, फोन है– अगर खुद को व्यस्त रखना चाहो तो इनके सिवा भी किताबे हैं.... कार है। ज्यादा नहीं, शाम को फ्रेश होने के बाद सिर्फ आधे घण्टे की ड्राईव पर निकल जाओ और लौट कर आओ तो बीयर या जिनका एक छोटा पैग और सिगरेट।''

बाजार के ये सारे उपकरण अकेलेपन को दूर करने के साधन है। मनुष्य का स्थान उपकरणों ने ले लिया है। स्त्रियां अपने होने का अर्थ खोज रही हैं। वे अपना एक स्पेस तलाशती हैं। वे अपने स्वत्व के लिए जीना चाहती हैं। आर्थिक स्वतन्त्रता ने स्त्री को कहीं उच्छृंखलताओं में फंसा दिया है तो कहीं वह अब भी पितृसत्ता की जकडन में कैद है। कभी वह विद्रोही है, कभी यायावर तो कभी खानाबदोश। महानगरों और कामकाजी दम्पत्तियों में बहुत थोड़े ही पुरूषों ने सकारात्मक भूमिका निभायी है, क्योंकि अभी भी अकेले स्त्री को ही घर बाहर दोनों दायित्वों को संभालना पड़ता है। समूची दुनिया बाजारीकरण से सिमट रही हैं। भीड़तंत्र में रहकर भी अकेलेपन का अहसास बाजारवाद की नई नैतिकता है। महानगरों में कामकाजी महिलाओं में बाजारवादी प्रभाव के रहते धूम्रपान, नशा, अकेलापन और उच्छृंखलता के लक्षण अधिक दिखाई दे रहे है। कार्यस्थलों पर महिलाओं का यौन शोषण भी एक गंभीर मामला है जो आधुनिक जीवन शैली की ही देन है।

सन्दर्भ

1. उत्तराधिकार बनाम पुत्राधिकार, अरविन्द जैन, पृ. 23
2. स्त्री चिंतन की चुनौतियां, रेखा कस्तवार, पृ. सं. 47
3. वही, पृ. 85
4. वही, पृ. 90
5. उपन्यास और वर्चस्व की सत्ता, वीरेन्द्र यादव, पृ. 191
6. विजन मैत्रेयी पुष्पा, पृ. 45
7. वही, पु. 47
8. स्त्री चिंतन की चुनौतियां रेखा कस्तवार, पृ. सं. 47
9. विजन, मैत्रेयी पुष्पा, पृ. स. 49
10. वही, पृ. स. 48
11. वही, पृ. 47
12. वही, पृ. 154
13. वही, पृ. 120
14. वही, पृ. स. 153
15. वही, पृ. स. 83
16. वही, पृ. स. 85
17. वही, पृ. स. 104
18. भूमण्डलीकरण और भारत : परिदृश्य और विकल्प, अमित कुमा सिंह, पृ. 14
19. मुन्नी मोबाइल, प्रदीप सौरभ, पृ. 14
20. वही, पृ. 16
21. वही, पृ. 18
22. वही, पृ. 75
23. वही, पृ. 76
24. वही, पृ. 143
25. रेहन पर रग्धू, काशीनाथ सिंह, पृ. 108
26. वही, पृ. 110
27. वही, पृ. 112
28. काशी का अस्सी, काशीनाथ सिंह पृ. – 144